Name of the college - A.P.S.M college Barauni, Begusarai

Name - Dr. Bharti Kumari (G.T)

Deptt - A.I.H. & C

Lession/ Plan For class - B A Part II Paper - I(H)

Date - 22-04-2021

Name of the Topic - स्तूप की वैदिक परम्परा

बौद्ध काल से पूर्व युग में स्तूप अथवा चैत्य का वर्णन मिलता है। उसकी ऐतिहासिक परम्परा वैदिक युग तक चली जाती है। ऋग्वेद में अग्निदग्ध (अग्नि से जलाना) तथा अनग्निदग्ध (10.15.14) शव को गाड़ने का विवरण प्रस्तुत करता है। अन्यत्र अनग्निदग्धाः (10/18/8) स्मारक के लिए प्रयुक्त किया गया है, जहाँ अग्नि द्वारा जलाये जाने का भाव नहीं है। शव को पूर्ण रीति से वस्त्र सहित जमीन में गाड़ा जाता है संभवतः भूमिगृह (पृथ्वी में घर। शब्द शव को पृथ्वी में रखने का द्योतक है। मृत शरीर की उपलब्धि के लिए भूमिगृह में सभी वस्तुएँ रखी जाती थी। उसके हाथ में धनुष रखने का भी उल्लेख है। वैदिक काल में मनुष्य के शव को गाड़ कर उसकी समाधि पर दूहाकार इमारत भी बनाया जाते थे। यजुर्वेद में इस तरह की चर्चा आई है कि समाधि को परिधि द्वारा घेर लिया जाता, ताकि उस घेरे से शव की पवित्र भूमि को संसार के अपवित्र वातावरण से पृथक् रखा जा सके। कालांतर में परिधि को वेदिका नाम से पुकारने लगे। वाजसनेयी संहिता में शव को गाड़ने का मंत्र उल्लिखित है।

शतपथ ब्राह्मण में वर्णन आता है कि चारों वर्णों के लिए विभिन्न आकार का शव टीला (कब्र) बनाना चाहिए। तैत्तरीय ब्राह्मण में भी भूमिगृह का विवरण मिलता है अतएव वैदिक परम्परा में शव को गाड़ने तथा जलाने की क्रिया काम में लाई जाती रही।

सूत्रकाल में जलाने के कार्य का विशेष रूप से उल्लेख है। आश्वलायन गृह्यसूत्र में अस्थिकुंभ (Urn) में शव की जली अस्थि या राख को रखकर पृथ्वी में गाड़ देने तथा ऊँचा टीला निर्माण करने का विवरण आया है। तात्पर्य यह है कि शव को जलाकर अवशेष को पात्र में रख कर गाड़ने की प्रथा प्रचलित थी। क्रमशः अस्थिकुंभ (अवशेष पात्र - Urn) पर स्तूप (टीला) का आकार तैयार करने की परिपाटी भी ज्ञात होती है। भारत की इस वैदिक परम्परा का अनुकरण विदेशों में भी होता रहा। बेबिलान के निपुर स्थान में एक विशाल समाधिस्थान मिला, जिसमें अनेक भस्मघट गाड़े हुए पाये गये हैं। कुछ भस्मघट ईसापूर्व 3000 वर्ष के बतलाये जाते हैं। यूनान में जलाने की प्रथा थी, जिसका वर्णन आदि कवि होमर ने अपने काव्यों में किया है। वह कहता है कि दूरस्थ देशों में मारे गए योद्धाओं का शव घर में लाना संभव न था, अतएव उन्हें जला कर भस्म घरों में लाया जाय। इससे प्रकट होता है कि यूनान में शव को जलाने की प्रथा बाद में चालू हुई। यूरोप में ईसाई मत के प्रचार से दाह-संस्कार प्रथा का अंत हो गया। दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में भारत से सदा सदा सम्पर्क बना रहा। इस कारण वहाँ जलाने की प्रथा भी प्रचलित रही। PTO

जलाने से कुछ दिन पूर्व दिनों तक शवों को मसाले में सुरक्षित रखते हैं। थाइलैंड में राजाओं के शव छह मास तक ऐसा करते थे। बर्मा में फुंगी (बौद्ध भिक्षु) के शव को एक सप्ताह मधु में सुरक्षित कर दाह संस्कार किया जाता है। भस्म घड़े में रख कर गाड़ी जाती और उस पर समाधि बनती है।

प्राचीन समय से यजुर्वेद वर्णित शव टीला की परिपाटी चल पड़ी। रामायण के वर्णन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महापुरुषों या नृपतियों की स्मृति में चैत्य (स्तूप) बनते थे। दीर्घनिकाय में तथागत का थूप (स्तूप), प्रत्येक बुद्ध तथा चक्रवर्ती नरेशों के स्तूपों का विवरण पाया जाता है। जातकों में थूप का प्रयोग स्मारकों के लिये किया गया है। इस प्रथा के अनुसार भारत में चैत्यों तथा स्तूपों का निर्माण बौद्ध युग में हुआ। इनके बाहुल्य के कारण मध्ययुगीन टीकाकार चैत्य का अर्थ बौद्धायतन ही करने लगे। (सायण ने 16वीं सदी) श्मशान की परिधि पर व्याख्या करते हुए प्रस्तर की वेदिका का वर्णन किया है। मध्ययुग में वैदिक टीले की कल्पना संभव न थी, जिसका स्वरूप स्तूप ने ले लिया। स्तूप का इतिहास भी यही बतलाता है कि बौद्ध युग से पूर्व स्मारक - स्तूप निर्मित होते रहे। डॉ. काणे का मत है — कि "मृत शरीर का दाह - संस्कार चार चरणों में पूर्ण किया जाता था। (1) शव को जलाना (2) राख का संग्रह (3) भस्मकलश (पात्र) में रखना (4) स्मारक बनाना। इस प्रकार स्मारक (समाधि) बनाने का कार्य अत वैदिक सिद्धान्त